तेवरीपक्ष -21

तेवरी-विधा को समर्पित प्रस्तुति

वर्ष-28, अंक-3, जु.सि.-20011, मूल्य-15 रु., वार्षिक-50 रु.

दर्शन बेज़ार के सद्यः प्रकाशित तेवरी-संग्रह

'ये ज़ंजीरें कब टूटेंगी'

पर केंद्रित अंक

संस्थापक-

लोककवि रामचरन गुप्त

परामर्श-

डॉ. गोपाल बाबू शर्मा

दर्शन बेज़ार, अशोक कुमार यादव

संपादक-रमेशराज़

Scanned by CamScanner

तेवरियां

सुशील सरित

दुनिया एक खिलौना प्यारे
लगती जादू-टोना प्यारे।
जिनको हार पिन्हाओ उनका
देखा कांटे बोना प्यारे।
लगती कभी कुनैन, कभी तो
लगती रबड़ी दोना प्यारे।
मानव क्या पशु को भी अच्छा
लगता अपना छोना प्यारे।
हवस बढ़े तो अच्छे-अच्छों-
का क़द होता बोना प्यारे।

डॉ. राजेन्द्र मिलन

हम हैं बड़े महान फलाने, धत् तेरे की।
पूरे बेईमान ढिकाने, धत् तेरे की।
मूंछप्पन की झुकी मूंछ हमने ऊंची की,
अपनी झूठी शान सयाने, धत् तेरे की।
बड़ी-बड़ी डींगें, अपना तकिया कलाम हैं,
हम हैं फन्नेखान दिवाने, धत् तेरे की।
अंग्रेजी में कर हिंदी की ऐसी-तैसी
अपनी बड़ी दुकान अजाने, धत् तेरे की।
'मिलन' पढ़ायी जीवन-भर की काम न आई,
टूटी तीर-कमान जमाने, धत् तेरे की।

योगेन्द्र शर्मा

जिसने किया प्रणाम धरा को, गगन हुआ,
खुशबू की तिजारत नहीं की, वो चमन हुआ।
मुमताज की याद में जब बनने लगे ताज,
हाथों को क़लम करने का तब से चलन हुआ।
हम ने कही तो दुनिया ने माना उसे बकवास,
वही बात महाकवि ने कही तो कथन हुआ।
गुलाब के पड़ोस में लगता था वो हसीन,
उंगली में आ चुभा तो कांटा चुभन हुआ।
यह बात सोच-सोच कर मुर्दे हैं परेशान,
रेशम अगर पहन लें तो, वो भी कफन हुआ।
तुझको गले लगाने का मौका हुआ नसीब,
बदनसीब आंख खुली तो सपन हुआ।

ज्ञानेंद्र 'साज़'

उजड़ा हुआ चमन है आँखों के सामने।
लुटता हुआ वतन है आँखों के सामने।
इस दौरे-सियासत की तिजारत में आजकल
हर मोड़ पर गबन है आँखों के सामने।
कुर्सी का चमत्कार कहें या कहें नसीब
रहबर हुआ रहजन है आखों के सामने।
मंहगाई भ्रष्टाचार से है त्रस्त सभी के
सीने में इक जलन है आँखों के सामने।
इस देश की खुशहालियों में आग देखकर
रोता हुआ गगन है आँखों के सामने।
तुलसी, कबीर, सूर औ' रसखान की ऐ 'साज़'
सूनी हर अंजुमन है, आंखों के सामने।

राजेन्द्र वर्मा

चकाचौंध से प्यार हुआ,
घर-आँगन बाजार हुआ।
हुक्मरान बेजार हुआ,
फरियादी लाचार हुआ।
रोटी मिलनी मुश्किल है
सपनों का व्यापार हुआ।
काली-मेंहदी, शैंपू-क्रीम,
जीवन का आधार हुआ।
महंगाई की मार पड़ी
जीना ही दुश्वार हुआ।
रिश्तों के मानी बदले,
हर कोई बस 'यार' हुआ।
सच्चाई ताने सहती,
झूठ सभी का यार हुआ।
खबर तो हैं कोने में
विज्ञापन अखबार हुआ।
जीवन की लय खंडित है
दुःखी सकल संसार हुआ।

Scanned by CamScanner

तेवरी में विरोध-रस

काव्य में 'विरोध' की उपस्थित आदिकालिक ही नहीं, सार्वकालिक और सार्वभौमिक है। विरोध शारीरिक व मानसिक हिंसा के बोध से उत्पन्न होता है। परम्परा या लीक से हटकर कुछ भी न सोचने वाले आचार्य इस बात से असहमत हो सकते हैं, किन्तु मेरा मानना है कि काव्य में रस के रूप में 'विरोध' आदिकाव्य 'रामायण' के प्रथम श्लोक की प्रथम पंक्ति-'मा निषाद! प्रतिष्ठाम् त्वमगम' के माध्यम से आदिरस होने का गौरव प्राप्त करता है। काममग्न क्रोंचयुगल में से एक का वध करने वाले निषाद के प्रति श्राप के रूप में व्यक्त अनुभाव कि 'हे निषाद तुझे जीवन भर प्रतिष्ठा नहीं मिलेगी', में स्थायी भाव आक्रोश और उससे उत्पन्न रस 'विरोध' पूरी तरह घनीभूत है।

'विरोध' का स्थायी भाव 'आक्रोश' है। 'आक्रोश' मनुष्य के मन की वह संवेगात्मक अवस्था है, जिसका रूप प्रतिवेदनात्मक होता है। प्रतिवेदना अर्थात् किसी भी घटना से असहमति जिसका प्रधान लक्षण है। **'आक्रोश' की स्थिति में मनुष्य अपने को बलशाली के समक्ष दुर्बल और असहाय महसूस करता है। अत्याचारी का कुछ न बिगाड़ पाने की विवशता आक्रोश को जन्म देती है। अपमान, उपहास, तिरस्कार की मार से तिलमिलाता मनुष्य भीतर ही भीतर घुटता है, क्षुब्ध होता है। मन ही मन उस व्यक्ति को कोसता है, श्राप देता है, जिसने उसके मन को चोट पहुंचायी होती है।**

आक्रोश क्रोध का प्रर्याय नहीं। क्रोधित मनुष्य सकारण या अकारण किसी भी व्यक्ति पर आक्रमण करने को आतुर होता है, जबकि आक्रोशित मनुष्य, आक्रोश की स्थिति में ऐसे व्यक्ति के **विनाश की केवल कामना** करता है, जिसने उसे सताया हो। जीवन में क्रोध के अवसर कम होते हैं, जबकि मनुष्य आपे से बाहर होकर किसी को मारता-पीटता है या तोड़फोड़ करता है। किसी से अपमानित या प्रताड़ित होकर आक्रोश के संताप को व्यक्ति स्थायी रूप से दीर्घकाल तक झेल सकता है। कौरववंशी दुर्योधन-दुस्शासन से अमानित पांडवों की पत्नी द्रौपदी इसका सटीक उदाहरण मानी जा सकती है।

'भगवान इसके वंश का नाश हो जाये', 'कम्बख्त बिजली वाले कहां सो गये हैं जो बिजली नहीं दे रहे', 'ये कमीना जाने कब मरेगा', 'ये निकम्मी सरकार कब बदलेगी' जैसे अनुभावों से स्पष्ट पता लग जाता है कि मनुष्य की मन:स्थिति आक्रोश से भरी हुई है। **आक्रोश एक सुविचारित प्रक्रिया है, जबकि क्रोध में विवेक-शून्यता समावेशित होती है।**

क्रोध का प्रकटीकरण वाहय होता है जबकि आक्रोश का समस्त द्वंद्व मानसिक रहता है। किसी व्यक्ति को मार डालना क्रोध के अन्तर्गत आता है जबकि किसी के मरने की कामना करना आक्रोश है।

क्रोध में तलवार, चाकू, बन्दूक, लाठी, घूंसे का इस्तेमाल शत्रु से अपने को अधिक ताकतवर मानकर होता है, जबकि आक्रोश में कुछ न कर पाने की विवशता के रूप में क्षुब्धता, तिलमिलाहट, बौखलाहट, कोसने की क्रिया, मन ही मन गाली देने की प्रक्रिया आदि से लेकर अन्त तक बनी रहती है।

अत: यह कहना अप्रासंगिक या अतार्किक नहीं होगा कि क्रोध जहां रौद्रता को अनुभावित करता है, वहीं आक्रोश का अनुभावन विरोध में होता है।

Scanned by CamScanner

प्रसिद्ध कवि दर्शन 'बेज़ार' के 'देश खण्डित हो न जाए', 'एक प्रहार लगातार' के बाद सद्यः प्रकाशित तेवरी संग्रह 'ये ज़ंजीरें कब टूटेंगी' में स्थायी भाव आक्रोश सर्वत्र व्याप्त है। आक्रोश के पैदा होने के कई कारण हैं-

१. वर्तमान सारा का सारा सिस्टम अन्यायकारी है-

तेरे दुःख से किसे काम है, बोल न कुछ बहरा निजाम है
कौन सुनेगा तेरे घर की, गली-गली में कोहराम है।

२.नौकरशाह 'जवाबदेही' से मुक्त होकर सिर्फ लूटने और घोटाले करने में लगे हैं-

पिछले वर्षों में तरक्की ये है सबकी गांव में
सिर्फ कागज पर सड़क है एक सुख की गांव में।

३.अपराधी, हिंसकवृत्ति के लोग संसद या विधान सभाओं की शोभा बढ़ा रहें हैं-

नाम था जिसे कभी वारंट जारी/आज उसकी आरती सबने उतारी।
तीन सौ दो की दफा में लिप्त होकर/खूब की गन्दी सियासत की सवारी।

४.आचरण का दुमुंहापन सर्वत्र उजागर हो रहा है-

जेब में पहुंची सुनामी की उगाही/स्वयंसेवी संस्था के बन प्रभारी।

५.आम आदमी की मजबूरी, बदहाली, कंगाली का अनुचित लाभ आज भी सूदखोर उठा रहे हैं। वे उसका जमकर शोषण कर रहे हैं, उसे और कर्ज में डुबा रहे हैं-

'होरी' के सर से ये कर्जा कभी न कम हो पायेगा
आज गयी है गाय कर्ज में कल को घर भी जायेगा।

६.स्वार्थ, व्यक्तिगत लाभ की लालसा ने समाज के उस नैतिक और बलिदानी स्वरूप को ही त्यागना शुरू कर दिया, जिससे गौरवशाली इतिहास रचा जाता है-

भूल गयी सभ्यता उन्हें जो इन्कलाब लेकर आये
पूजे उनके चरण मंच पर भाषण जो देकर छाये।

७.गांव जो भोलेपन, सच्चाई, अथाह प्रेम और सद्भाव के प्रतीक थे, अब समस्त प्रकार की बुराईयों से युक्त हैं-

अब नहीं कोई यहां हंसता व गाता देखिए/गौर से इस गांव की जर्जर व्यवस्था देखिए।
एक मक[illegible] तरह बेज़ार है हर ज़िन्दगी/जाल में खुद के यहां हर शख्स फंसता देखिए।

८.पूरे देश में नारी अपमान और यौन-हिंसा का तांडव ज़ारी है-

एक अभागिन चीरहरण पर विलख-विलख कर चिल्लायी
आंखें नीचे किये उधर से चले गये मुंह फेरे लोग।

९.प्रगति के नाम पर बढ़ती दुर्गति को लेकर भी कवि के मन में आक्रोश है-

नाम-पट्टिका लगा, यहां पर स्वागत द्वार सजाये हैं
रजवाड़ों की नयी संस्कृति सब पर भारी निकलेगी।

१०.पाश्चात्य सभ्यता के अधोमुखी चिन्तन ने एकता के उस सूत्र को ही तहत-नहस कर दिया है जो समाज और समाज की छोटी इकाई परिवार को नेह और प्रेम के साथ बांध कर रखता था। आज हालात यह हैं-

उनके हिस्से में कुटिया का बस छोटा-सा कोना है
दादी-दादी क्या कर लेंगे जब बंटवारा होना है।

११.अकल डंकल और गैट की साजिश किसी से छुपी नहीं है। नये-नये-बीजों के सहारे कृषि उत्पादन बढ़ाने के आश्वासन का ही यह परिणाम है कि भारत के लाखों किसान आत्महत्या कर चुके हैं। पेटेण्ट बीज' को लेकर भी कवि के मन में आक्रोश है-

अव्वल तो बीजों का उगना संदेहों के घेरे में
अगर उगे ये बीज, फसल को रोगग्रस्त ही होना है।

तेवरीपक्ष, जुलाई-सितंबर-२०११, अंक-३, वर्ष-२८, पृ. ४

Scanned by CamScanner

१२.देश में पनपती स्वान और भाटों की संस्कृति को लेकर भी कवि आक्रोशित है-
बड़े-बड़े कवि उछल-उछलकर विरदावलियां गायेंगे
भाटों जैसी 'धूमिल' की छवि बारी-बारी निकलेगी।

'ये जंजीरे कब टूटेंगी' तेवरी संग्रह के उपरोक्त उदाहरणों से यह तथ्य पूरी तरह उजागर हो जाता है कि तेवरीकार असंगतियों, विसंगतियों-अनीति-अत्याचार-व्यवस्था के विद्रूप-अलगाववाद-अपसंकृति के बीच व्यथित-पीड़ित ही नहीं, आक्रोशित भी है। तेवरीकार के भीतर ज्वालामुखी की तरह पनपने वाले **आक्रोश का विस्फोट विरोधरस** के रूप में पहचाना जा सकता है।

आश्रय में किस प्रकार के रस का निर्माण हो रहा है या हुआ है, इसकी पहचान उसके अनुभावों से की जाती है। विभाव-अनुभाव-संचारी भाव के योग से बनने वाले रस की स्थिति का आकलन यदि हम दर्शन बेज़ार के उक्त संग्रह की तेवरियों में करें तो **स्थायी भाव आक्रोश** जागृत होने के बाद जो दशा ग्रहण कराता है उसका समस्त स्वरूप असहमतियुक्त, प्रतिवेदनात्मक और विरोध को उजागर करने वाला माना जाना चाहिए।

सर्वप्रकार के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक या प्राकृतिक पतन के जनक मनुष्य की काली करतूतों से आक्रोशित तेवरीकार दर्शन बेज़ार का मन अन्ततः जिस **विरोध की ऊर्जा** को प्रकट करता हैं उसे वाचिक अनुभावों के माध्यम से इस प्रकार पहचाना जा सकता है-

(क) व्यंग्य का सहारा लेना-
आओ हम विरदावलि गायें, गीदड़ को वनराज बनायें
छांट लिया सच का प्रतीक अब, गिरगिट को आदर्श बतायें।

(ख)अत्याचारियों के विरुद्ध लोगों को उकसाना-
जालिमों के रक्त-प्यासे तीर को/तोड़ दे पावों पड़ी जंजीर को।
है अगर 'बेजार', लिख तू तेवरी/थाम ले हाथों में इस शमशीर को।

(ग) साजिश का पर्दाफाश करना-
छत पे दाने कल परिन्दों को जो बिखराकर गया/आज कोने में छिपा बैठा है वो ही बनके बाज।

(घ) गौरवशाली अतीत की याद दिलाना-
जब गुलामी के नशे ने एशिया भरमा दिया/तब अकेले हिन्द ने यूरोप को थर्रा दिया।

(च) साम्प्रदायिक विचारधारा को गलत सिद्ध करना-
एक वहशी जुनून है सिर पर/उफ् ये हालत भी क्या हमारी है।

(छ) दबंगों की करतूतों को बताना-
एक बेवा की जला दी झोंपड़ी सरपंच ने/चल रहा है गांव में बरसों पुराना ये रिवाज।

(ज) सामाजिक बदलाव के लिये प्रेरित करना-
हकदार हैं जीने की ये कुचली हुई नस्लें/आखिर कोई कब तक इन्हें ठोकर लगायेगा।

(झ) क्रान्ति की बातें करना-
सितमगर के हाथों से ले खींच खंजर/नयी क्रांति के तू स्वागत में लग जा।

दर्शन बेज़ार की नवीनतम पुस्तक 'ये जंजीरें कब टूटेंगी' के लोकार्पण समारोह के अवसर पर इस कृति का आकलन करते हुए विभिन्न विद्वानों ने जो मत प्रस्तुत किये, उन मतों के आधार पर उक्त कृति सत्योन्मुखी चिंतन की ओजस अभिव्यक्ति घोषित की गयी। तेवरीपक्ष का यह अंक दर्शन बेज़ार के सद्यः प्रकाशित तेवरी-संग्रह-'ये ज़ंजीरें कब टूटेंगी' पर ही केंद्रित है। आशा है साहित्य-जगत में इस कृति का स्वागत होगा।

-रमेशराज

Scanned by CamScanner

तेवरी किसी नाकाम आशिक की आह नहीं

ज्ञानेन्द्र साज

सुविख्यात तेवरीकार दर्शन बेज़ार की नवीनतम कृति 'ये ज़ंजीरें कब टूटेंगी' उनकी सुलिखित, सुचयनित 48 धारदार तेवरियों का बेहतरीन संग्रह है। 'तेवरी' शीर्षक विधा को साहित्य में स्थापित करने के लिए तीन दशक से एक धीमा मगर पुख्ता संघर्ष होता रहा है। आज नहीं तो कल देश के सभी ग़ज़लकार भी इसे एक विधा के रूप में स्वीकारेंगे, मुझे यह पक्का यकीन है। इस संघर्ष में मेरे अनुज रमेशराज बराबर संघर्ष करते रहे हैं।

ग़ज़लकार 'ये ज़ंजीरें कब टूटेंगी' को पढ़कर इसे ग़ज़ल संग्रह ही कहेंगे, यह कोई बात नहीं होगी। उन्हें भाई दर्शन बेजारजी की ग़ज़लों में कहीं भी आक्रोशमय प्रस्तुति नजर नहीं आयेगी। वह तो उन्हें रदीफ, काफिया, बज्न, बह्र जैसी मान्यताओं पर ही कसेंगे। मैं इस पुस्तक के माध्यम से यह अवश्य कहना चाहूंगा कि वे सच को स्वीकारने की हिम्मत दिखायें।

आज देश में जो घोटाले और भ्रष्टाचार पोषित राजनीति पनप रही है वह समाज को क्या दे रही है, भ्रष्टाचार और घोटाले ही न? तो फिर समाज प्रदूषित क्यों नहीं होगा। आज वही प्रदूषण राष्ट्र और समाज की सबसे छोटी इकाई यानी हम और आपको भी अपनी चपेट में ले चुका है। आज के दौर में हम और आप भी दूध के धुले नहीं हैं।

ग़ज़ल का कथ्य कभी भी आक्रोशित नहीं रहा, उसका अपना निश्चित दायरा ही रहा जो प्रेमी-प्रेमिका से मिलन-विछोह की टीस या खुशी और साक़ी, शराब, मयख़ाना के इर्द-गिर्द ही घूमता रहा। ग़ज़ल इस रूप में बहुत प्यारी विधा है, मगर तेवरी कभी इस तरह का वातावरण में रहना पसंद नहीं करती। उसे तो आमजन की रोजी-रोटी की फिक्र है, उसे आदमी के नंगे बदन के लिए कपड़ों की फिक्र है, उसे खाली हाथों को काम दिलाने की फिक्र है, उसे निर्बल को दबंगों से बचाने की फिक्र है, उसे हर तरफ मच रही लूट की चिंता है। उसे सुरसा के मुंह की तरह बढ़ रही महंगाई से गरीबों को बचाने की चिंता है। तेवरी किसी नाकाम आशिक की आह नहीं, वरन् उस आदमी की व्यथा है जिसका शासन और प्रशासन द्वारा हर स्तर पर शोषण हो रहा है।

आइए, अब ऐसी विश्व और राष्ट्रव्यापी समस्याओं पर चर्चा करती बेज़ार के तेवरी-संग्रह 'ये ज़ंजीरें कब टूटेंगी' की तेवरियों पर भी दृष्टिपात कर लिया जाए-

'हंगामा हर चौराहे पर/दहशत में सारा अवाम है।'

क्या यह सच नहीं है सारे देश में यही हाल है। त्राहि-त्राहि मच रही है। मनुष्य चौराहों पर जाम लगा रहा है, कभी बिजली के लिए तो कभी टूटी सड़क को ठीक कराने के लिए। कभी महंगाई के विरोध में तो कभी दुर्घटना में मृत किसी व्यक्ति के लिए। ये सब क्या हो रहा है? दबंग, गुण्डे, दहशतगर्द शासन और प्रशासन की ही सरपरस्ती में पनपने वाले उन लोगों के विशेषण हैं जो समाज को जौंक की तरह खा रहे हैं/खोखला कर रहे हैं। उनका खिलाफत करने का मतलब अपनी जान से हाथ धोना है। प्रतीकों के माध्यम से यही बताता यह तेवर भी देखें-

Scanned by CamScanner

इस तरह डूबे परिन्दे खौफ में सैयाद के
ज़िंदगी जैसे कि उनकी दी हुई जागीर है।

बेतहाशा पानी के दोहन को लेकर उठ रही विश्वव्यापी समस्या पानी की होती जा रही कमी को लेकर भी तेवरीकार चुप नहीं बैठा, वह धरती मां से ही प्रश्न करता है और उत्तर भी देता है-

सूखे ताल-तलैया, रीती गागर, खाली डोल
कब तक ये विद्रूप रहेगा धरती माता कुछ तो बोल?
चुरा ले गये सब हरियाली मौसम के ये काले चोर
कहां गठरिया किसने बांधी कोई नहीं रहा मुंह खोल।

प्यार-मुहब्बत में भी जब कोई विसंगति उत्पन्न हो जाती है जो फिर वो प्यार नहीं रह जाता, उसमें भी एक आक्रोश रुपी व्यथा पैदा हो जाती है। मैं बेजारजी के शब्दों में ही एक पति से दूर गांव में बैठी पत्नी के प्यार की व्यथा का चित्र दिखा रहा हूं-

पाती नहीं तुम्हारी आयी अब घर जल्दी आ जाओ
खर्च हो चुका पाई-पाई अब घर जल्दी आ जाओ।
छोटी बिटिया हफ्तों से स्कूल नहीं जा पायी है
उसकी फीस नहीं भर पायी अब घर जल्दी आ जाओ।

या

उनके हिस्से में कुटिया का बस छोटा-सा कोना है
दादा-दादी क्या कर लेंगे जब बंटवारा होना है।
हर बेटे की अलग-अलग मति अलग-अलग सबकी राहें
कई जलेंगे घर में चूल्हे इसी बात का रोना है।

अब कोई यह बताए कि पारिवारिक प्यार की टूटती कड़ी को देख कौन आक्रोशित नहीं होगा? यह आक्रोश ही तेवरी के रूप में उपजता है। तेवरीकार मात्र समस्याओं की ओर ही उंगली नहीं उठाता, वह तो उसका हल भी बताता है, मगर समाज उसकी बात को ग्रहण कर ले तभी तो इंकलाब की उम्मीद की जा सकती है-

सींखचों को देखकर तू हो न यूं भयभीत रे,
आग उगले लेखनी कुछ इस तरह रच गीत रे।
वक्त रुकने का नहीं है साथियो! चलते रहो
वक्ष पर अन्याय के तुम मूंग नित दलते रहो।
तू अपनी खुद की हिफाजत में लग जा
जमाने से खुलकर बगावत में लग जा।

समस्या उठाना और उसका समाधान भी देना हर तेवरीकार की सोच का उम्दा नमूना है। यह बात बेज़ारजी की इस प्रकाशित पुस्तक ही नहीं उनके पूर्व तेवरी संग्रहों 'एक प्रहार लगातार', 'देश खण्डित न हो जाये' में भी बोलती है। उनकी हर तेवरी आक्रोश का दस्तावेज है। मैं अपनी ओर से उनके इस संग्रह पर उन्हें हृदय से साधुवाद देता हूं तथा भविष्य में उनसे और भी बेहतर तेवरियों के साथ आने की प्रतीक्षा भी कर रहा हूं। वे दीर्घायु हों, मेरा शुभाशीष उनके साथ है। वे अलख जगाए रहें...

संपादक जर्जर कश्ती, जयगंज, अलीगढ़

Scanned by CamScanner

तेवरी:आमजन के विद्रोह की पीड़ा

डॉ. अभिनेष शर्मा

प्रस्तुत तेवरी संग्रह 'ये ज़ंजीरें कब टूटेंगी' सार्थक सृजन प्रकाशन से प्रकाशित ऐसा सुरभित पुष्प है जो हिन्दी साहित्य के गुलदस्ते में अद्वितीय सुगंध रखता है। इसकी सुरभि का रसास्वादन जितनी भी बार करें कहीं न कहीं तृष्णा बची रहती है। रचना किसी भी रूप में हो, किसी न किसी पहलू पर तर्क का स्थान बना रहता है। आलोचकों को सिर्फ यही सिद्ध करना अच्छा लगता है कि सृजित रचना का रूप क्या है, उसका मान क्या है? रचना की गुणशीलता कैसी है, इसके आत्मरूप से उन्हें कोई सरोकार नहीं होता है। इसी परिप्रेक्ष्य में तेवरी को भी आलोचकों की कसौटी पर यही सोचकर रखा जाता है कि तेवरी ग़ज़ल है या नहीं या यह एक अलग विधा है। इसमें प्रेम है या नहीं, विसंगतियां है या नहीं।

तेवरी आमजनों के विद्रोह की पीड़ा की अभिव्यक्ति है या फिर राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत हृदय की हुंकार है। किसी भी रचना की कमनीयता, सार्थकता उसकी विवेचना में नहीं उसके प्रयुक्त शब्दों के मुखर प्रदर्शन में है और प्रस्तुत संग्रह की सभी रचनाओं में इस परंपरा का बखूबी निर्वाह हुआ है। संग्रह का शीर्षक **'ये जंजीरे कब टूटेंगी'** अपने आप में बहुत कुछ बयान कर देता है। तभी तो तेवरीकार कहता है-

तू नहीं रांझा, प्रलय का गीत तू/छोड़ दे ग़ज़लों में डूबी हीर को।

इस संग्रह में गांव हैं, तरक्कीपसन्द लोग हैं। आजकल की लूटकारी नीयत है। व्यंग्य के तीर हैं। दहशत में डूबी आंखें हैं। आपस में खंजर थामकर लड़ते हुए, एक दूसरे पर जुल्म ढाते हुए आदमी हैं व इन्हीं संदर्भों को लेकर रचनाकार का जीवंत कथ्य है।

पिछले वर्षों में तरक्की ये है-कि गांव में सिर्फ कागज की सड़क है। सुख के नाम पर गांव और उसके घरों में होने वाले बंटवारे का दर्द भी रचनाओं में उकेरा गया है। तभी तो नाती-नातिन का जिक्र इस प्रकार है-

नाती-नातिन की किलकारी भी दुःख का उपचार नहीं।
एकाकी जीवन का क्रंदन अश्रुपात में होना है।

स्वराज मिला भी और नहीं भी। मिला एक धोखधड़ी से भरा जनता के साथ खिलवाड़। अखण्ड भारत को खण्ड-खण्ड करती साजिश-

छत पर दाने कल परिंदो को बिखराकर गया
आज कोने में छिपा बैठा है वो ही बनकर बाज।

संग्रह में हर संबंध पर कुछ न कुछ लिखा गया है। हर एक तेवरी के तेवर खासे तीखे हैं। उम्मीद है कि यह तीखापन बरकरार रहेगा और हम सब आलोचनाओं-प्रत्यालोचनाओं को पीछे छोड़कर खालिस तीखी तेवरियों का रसास्वादन करते रहेंगे।

(देव हॉस्पीटल, के.पी. स्कूल के सामने, अलीगढ़)

दर्शन बेज़ार के सद्यः प्रकाशित तेवरी संग्रह-

ये ज़ंजीरें कब टूटेंगी

की आगामी १६ पृष्ठों पर क्रमशः प्रस्तुति

Scanned by CamScanner

१७

आप यहाँ बेकार किसी से आस लगाए बैठे हैं,
देखो दो घर छोड़ पड़ोसी ब्यूह बनाए बैठे हैं।

नाहक खुश होता फिरता है तू आज़ाद उड़ानों पर,
कुछ बहेलिए सोच परिंदे जाल बिछाए बैठे हैं।

तेरी चौखट के ऊपर कल जिनने मत्था टेका था,
शाम हुए पिछवाड़े वे असलहे छुपाए बैठे हैं।

जो देते हैं दुआ तुझे कि तेरा सफ़र मुबारक हो,
तेरी राहों में अब रोड़े वही बिछाए बैठे हैं।

ऊपर को भी देख कि घर की ऊँची उठी मुंडेरों पर,
गिद्ध कहीं से आके तुझ पर आँख गढ़ाए बैठे हैं।

यह तो चोरों की बस्ती है अपनी गठरी तू सम्हाल रे,
यहाँ गिरहकट सुंदर-सुंदर हाट सजाए बैठे हैं।

पूछेगा 'बेज़ार' न कोई तेरे सच के सिक्के को,
यहाँ झूठ के सिक्के ही बाजार दबाए बैठे हैं।

Scanned by CamScanner

१८

कैसी है तासीर यहाँ के पानी में,
उगते देख बबूल सभी हैरानी में।

कंकड़ थे पहले ही राहों के रोड़े,
काँटे और बिछे हैं अब अगवानी में।

रोपी थीं कलमें गुलाब की जितनी भी,
सूख गयीं वे घर की खींचातानी में।

खाद नहीं, तेजाब मिला है खेतों को,
हम फसलों को उगा आ गये हानी में।

जहरीले पौधों की फसलें और न हों,
रहना है हम सबको इस निगरानी में।

'बेजार' सियासत फूल न खिलने देती है,
सत्ता काँटों की है अब मनमानी में।

Scanned by CamScanner

ये जंजीरें कब टूटेंगी

१९

सींखचों को देखकर तू हो न यूँ भयभीत रे,
आग उगले लेखनी कुछ इस तरह रच गीत रे।

भूल से तुझको न छूले राजसी अभिव्यंजना,
लिख समय का सत्य, कर ले झौंपड़ी से प्रीत रे।

लेखनी जब भी मँथेगी शब्द, भाषा, नव्यरस,
तब कहीं जाकर मिलेगा क्रांति का नवनीत रे।

लोग जो हारे वही सैलाब में बहते गये,
धार के विपरीत जो तैरा उसी की जीत रे।

रात में चलकर अकेला जाएगा तम में भटक,
चल कि यूँ ही सोचने में दिन न जाए बीत रे।

टूटती आशा लिए 'बेजार' यूँ रोते नहीं,
ज़िंदगी की सिसकियों को तू समझ संगीत रे।

Scanned by CamScanner

२०

आखों में मुश्किलात नये ख्वाब गढ़ गये
हर हादसे पे गम मेरे परवान चढ़ गये।

की कोशिशें रकीब ने मैं घर न जा सकूँ
पहले चले जो मुझसे, सभी वह बिछड़ गये।

मुझ पै गिराके बिजलियाँ जालिम को क्या मिला,
मुझको जलाने वालों के खुद घर उजड़ गये।

दुश्वार रास्तों पे निकल ही पड़ा जो मैं,
ठोकर से मेरी राह के पत्थर उखड़ गये।।

'बेजार' मेरे पाँव के छालों की पूछ मत,
होके लहूलुहान कदम आगे बढ़ गये।।

Scanned by CamScanner

ये जंजीरें कब टूटेंगी

२१

इस तरह से क्रांति के कुछ मर्सिए गाए गये,
त्याग के कुरबानियों के अर्थ झुठलाये गये।

गौर से हमने पढ़ी इतिहास की जब भी किताब,
हर तरह बस भेड़ियों के ही निशां पाए गये।

हमने पुश्तैनी गुलामी की है इस हद तक सुनो!
उनके घर के स्वान तक गोदी में दुलराये गये।

उनकी तारीफों के पुल हम बाँधते ऐसे गये,
मंच पर बैठे गिरहकट शाह बतलाये गये।

घर की ड्योढी पर खड़े दरवान को भी कर सलाम,
खानदानी भक्त के जज़्बात दिखलाये गये।

किस तरह 'बेजार' सजदे में झुकाये अपना सर,
बुतकदे या मयकदे में चोर जब बिठलाये गये।

Scanned by CamScanner

२२

माँगती है जब नई पीढ़ी बुर्जुगों से हिसाब,
दे नहीं पाता उसे कोई सवालों का जवाब।

घर में जो पूँजी जमा थी बोलिए अब है कहाँ?
कर्ज ऊपर से किसी का चढ़ गया कैसे जनाब।

हम किसी की रोटियों को ताकते हरगिज न थे,
आपने व्यंजन खिलाकर आदतें कर दीं खराब।

ब्याज तक खाली खजाने से अदा होती नहीं,
मूल धन से वापसी की बंद ही रखिए किताब।

क्या कभी 'बेजार' इन हालात से उभरेंगे हम,
देखते रहते हैं हम दिन-रात कुछ ऐसे ही ख्वाब।

Scanned by CamScanner

२३

हर कोई अपनी ही धुन में चला जा रहा दाबे गठरी,
रातों-रात धनी होने की मची हुई है अफरा-तफरी।

फुर्सत नहीं किसी को पल-भर बैठ कहीं दम सुस्ताले,
सबके माँथे चिंताओं की खिंची हुई रेखा गहरी।

यह तेरा, वह मेरा बस ये समीकरण ही याद हमें,
अपने और परायेपन की बाँटन को रस्सी पसरी।

कौन पड़ौसी तीन दिनों से भूखे पेट यहाँ सोया,
पूछा नहीं किसी से, हम तो चाख रहे माखन-मिसरी।

हमने कब पहचानी पीड़ा, जन की आह-कराहों की,
इस घर से उस घर तक टूटी संबंधों की हर पटरी।

ऐसे में 'बेजार' क्रांति की ज्योति उठा तुम चलो, बढ़ो,
गूँजेगी फिर से मानस में नयी चेतना-स्वर-लहरी।

Scanned by CamScanner

२४

जल, थल, नभ, पाताल, चराचर, सबके सब हैं डाँवाडोल,
अब तो हे शंकर प्रलयंकर, अपना नेत्र तीसरा खोल।

कब तक ध्यानमग्न ही रहकर चुप बैठे तुम देखोगे,
हिंसा के कारण लपटों से झुलस रहा सारा भूगोल।

अमरीका हो या कि एशिया या अफ्रीका या यूरोप,
सुलग रही है आग हर जगह सभी रहे ज़हरीला बोल।

बारूदी सुरंग के भीतर बैठा उग्रवाद का अजगर,
जहर उगलती फफकारों से रहा हवाओं में विष घोल।

नित दुष्टों की हथियारों संग नेता करवाते घुसपैंठ,
अब 'बेजार' न राजनीति का दीख रहा है कोई मोल।

Scanned by CamScanner

२५

जिन शहीदों ने लहू देकर सँवारा है चमन,
आज नम आँखों से मेरा उन शहीदों को नमन।

छीन ली जब भी कपट से शत्रु ने कुछ भूमि तो,
चल पड़े रणबाँकुरे बाँधकर सर पर कफन।।

गोलियों, बारूद-बम के बीच भी हँसते रहे,
होके जख्मी भी न की महसूस पल-भर को थकन।।

गोलियों का शोर, बर्फीली हवाएँ, क्या फिकर?
जब भगत सिंह की तरह मन में लगा ली हो लगन।।

रात में भी बर्फ की चोटी पै बस चढ़ते गये,
दम लिया जाकर वहाँ फहरा तिरंगा-ए-वतन।।

जान देने को वतन पर होड़-सी फिर मच गई,
याद आई आखिरी दम तक लिये राखी बहन।।

अपने अद्भुत शौर्य से आकाश-से ऊँचे हुए,
सर झुकाने को उन्हें झुक जायेगा खुद ही गगन।।

जिनकी कुर्बानी के किस्से एक से बढ़कर हैं एक,
कह नहीं पाती जुबाँ 'बेजार' की उनके कथन।।

Scanned by CamScanner

२६

आज गुमसुम हैं कभी तो फन उठेंगे,
हैं सँपोले एक दिन विषधर बनेंगे।।

राजधानी में हजारों बाँबियाँ हैं,
ये उजाले में कहीं छुपकर रहेंगे।।

खोजने को रात में अपना शिकार,
खल कहीं निर्भीक हो विचरण करेंगे।।

आजकल बेचैन हैं रूहे-नवाब,
कहकहे बारादरी में क्या लगेंगे।।

बस्तियाँ खुद ही सुरक्षा को बढें अब,
सब घरों में जाके अब अजगर छुपेंगे।।

हर तरफ चौसर सियासी बिछ गयी है,
द्रौपदी को ही बड़े खतरे बढ़ेंगे।।

Scanned by CamScanner

२७

संबंधों पर जमी स्वार्थ की काई अब,
सदाचार के अर्थ हुये हरजाई अब।

क्लान्त-भ्रमित-असहाय बटोही क्या बोले,
खन्दक है इस ओर, उधर है खाई अब।

आदर्शों का पतन हुआ इतना भारी,
दो-दो चहरे सबके पड़े दिखाई अब।

बसा राग दरबारी सबकी आदत में,
बन बैठे सब लोग चन्द्रवरदाई अब।

'दिनकर' की हुंकारें गायब मंचों से,
मात्र चुटकुला विज्ञ हमारे भाई अब।

सिर-माथे 'बेज़ार' हमारे स्वार्थ चढ़े,
वैष्णवजन तक भूले पीर पराई अब।

Scanned by CamScanner

२८

सूखे ताल-तलैया-नदियाँ, रीती गागर, खाली डोल,
कब तक ये विद्रूप रहेगा, धरती माता कुछ तो बोल?

चुरा ले गये सब हरियाली मौसम के ये काले चोर,
कहाँ गठरिया किसने बाँधी, कोई नहीं रहा मुँह खोल।

क्लान्त हाँफते हुये बटोही इस भटकन का अन्त नहीं,
मृग मरीचिका में रसवन्ती आज रहा तू व्यर्थ टटोल।

चक्रवात ही चक्रवात का शेष रहा हमसे सम्बन्ध,
शीतल मंद हवा के झौंके बेच दिये हमने बेमोल।

हमने घर के आसपास ही आग लगायी वो 'बेजार'
काला धुँआ, हवा तेजाबी, जहर दिया अम्बर में घोल।

Scanned by CamScanner

ये जंजीरें कब टूटेंगी

२९

उनके हिस्से में कुटिया का बस छोटा-सा कोना है,
दादा-दादी क्या कर लेंगे जब बँटवारा होना है।

हर बेटे की अलग-अलग मति, अलग-अलग सबकी राहें,
कई जलेंगे घर में चूल्हे इसी बात का रोना है।

अव्वल तो बीजों का उगना संदेहों के घेरों में,
अगर उगे ये बीज फसल को रोगग्रस्त ही होना है।

मँझले बेटे ने अमरीका से 'डालर' को भेजा है,
बूढ़े हाथ करें क्या उसका चाहे चाँदी-सोना है।

नाती-नातिन की किलाकारी भी दुःख का उपचार नहीं,
एकाकी जीवन का क्रंदन अश्रुपात में धोना है।

साँसों की 'बेज़ार' गठरिया लदी हुई अपने सिर पर,
भले बोझ है भारी लेकिन, मजबूरी है, ढोना है।

Scanned by CamScanner

३०

होरी के सर से ये कर्जा कभी न कम हो पायेगा,
आज गयी है गाय कर्ज में, कल को घर भी जायेगा।

बादल छाकर नहीं बरसते, फसल गयी है सारी सूख,
मौसम भी अब हर गरीब को और गरीब बनायेगा।

प्रगतिवादियों की हमदर्दी पाकर इतना होना है,
मृग मरीचिका जैसा कोई खेल यहाँ मुसकायेगा।

रही झेलती निर्धन-जोरू 'भौजाई' का दंश यहाँ,
चाची, ताई, अम्मा कहकर, इसे न गाँव बुलायेगा।

जनक-सुता के संग राम हैं इस युग भी भोले-भाले,
पंचवटी पर मारीचों का और अभी छल छायेगा।

Scanned by CamScanner

३१

आओ हम विरदावलि गाएँ,
गीदड़ को वनराज बताएँ।

दौड़ रहे सब जिस ड्यौढ़ी तक,
हम भी जाकर शीश झुकाएँ।

होड़ लगी आगे रहने की,
फिर हम क्यों पीछे रह जाएँ।

स्तुति-वदन, अभिनन्दन का,
घर-घर वातावरण जगाएँ।

छाँट लिया सच का प्रतीक अब,
गिरगिट को आदर्श बताएँ।

हम 'बेजार' भले हैं कायर,
भगत सिंह की कसमें खाएँ।

Scanned by CamScanner

३२

बँटवारे की बात सभी के अंतर में
नयी हवा का दौर पुरानी बाखर में।

दादाजी की छड़ी-घड़ी चश्मा-टोपी,
हो जायेंगे तितर-बितर घर ही घर में।

कौन पढ़ेगा मुझे, कौन अब बाँचेगा,
अम्मा की रामायण आयी इस डर में।

सामूहिक पूजा का चलन खत्म होगा,
भक्ति-गीत होंगे अपने-अपने स्वर में।

बूढ़ी काकी सबको समझाती ऐसे
जैसे सर को पीट रही हो पत्थर में।

Scanned by CamScanner

नयी ज़ंजीरों को कैसे तोड़ा जाए?

डॉ. (श्रीमती) सुमन शर्मा

'ये ज़ंजीरें कब टूटेंगी' तेवरी-संग्रह की कविताओं में कवि दर्शन बेज़ार ने अपनी भावानुभूतियों को सशक्त भाषा के माध्यम से व्यक्त किया है। कवि सहृदय होता है। वह अपने चारों ओर जो देखता है, उसे देखता ही नहीं अपितु अनुभव भी करता है। अनुभव के इसी भाव को काव्य-शास्त्रियों ने भाव का साधारणीकरण कहा है। मैं काव्य-शास्त्र की परिधि से मुक्त होकर इस संकलन की तेवरियों के विषय में अपनी बात कह रही हूं।

बेज़ार की तेवरियों में समाज के विशेषत: स्वातंत्र्योत्तर समाज के विभिन्न पक्ष प्रतिबिम्बित होने के साथ-साथ स्वयं अपनी व्यथा-कथा की परतें खोलते हैं। उन परतों को जो ढकी हुई हैं-स्वतन्त्रता प्राप्ति के पर्दे के नाम से, पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से किये गए विकास के नाम से, गरीबी के उन्मूलन और आर्थिक प्रगति के नाम से, बेरोजगारी मिटाने के नाम से, पंचायती राज की स्थापना के नाम से, भाईचारे की भावना और समरसता के सिद्धान्त के विकास के नाम से। कवि ऐसे अनेक भावों के साथ साक्षात्कार कराता है और उन्हें जन-जन के मन तक पहुंचा कर बताना चाहता है कि आज के भौतिकवाद ने, आज के धन-बल एवं छल-कपट सम्पन्न चातुर्य भाव ने व्यक्ति को व्यक्ति से कैसे काट दिया है। ऐसे सभी भावों ने ज़ंजीरों का रूप धारण कर समाज को बुरी तरह जकड़ लिया है। हमने गुलामी की जंजीरें तो तोड़ दीं, लेकिन इन नई ज़ंजीरों की बेड़ियों को कब और कैसे तोड़ पाएंगे? कवि बेजार पूर्णत: आशावादी हैं। उनके हृदय में एक ऐसी क्रान्ति लाने की भावना है जो तेवरियों के माध्यम से प्रकट होकर शोषित-पीड़ित-भयाक्रांत जन के मन-मानस में इन सबके विरुद्ध एक संगठित आदर्श विद्रोह की भावना जाग्रत कर दे, जिसकी सबल शक्ति से सभी ज़ंजीरें चूर-चूर हो जाएं। इस श्रेष्ठ कार्य के लिए वह चेताता है। कवि-वर्ग को कहता है कि वह अपनी ओजस्वी वाणी से अलख जगाए।

काव्य बहुजन हिताय-बहुजन सुखाय तथा सुरसरि-प्रवाह की रीति से सबकी समृद्धि करने वाला होता है। इस उद्देश्य की पूर्ति का माध्यम भाषा होती है जो सामान्यजन तक उसे पहुंचा सके। बेज़ार की तेवरियों की भाषा सामान्य जन की सरल भाषा है, जिसमें प्रयुक्त प्रचलित मुहावरे और कहावतें कुव्यवस्थाओं, सफेदपोश नेताओं और ईमानदारी का कवच पहने समाज में फैले भेड़ियों पर तीखा व्यंग्य करते हैं। मैं अपनी बात को अधिक न बढ़ाकर प्रस्तुत संकलन की तेवरियों से कुछ चुनी हुई पंक्तियां जो पाठक के हृदय पर गहरा प्रभाव छोड़ती हैं, यहां प्रस्तुत करती हूं-

बांझ इन्सानियत हुई बैठी, पांव हैवानियत का भारी है।/ एक बंटवारे के गम से हम उबर पाये न थे, दूसरे बंटवारे की करने लगे तैयारियां। ....आदि-आदि।

तेवरीपक्ष, जुलाई-सितंबर-२०११, अंक-३, वर्ष-२८, पृ. ९

Scanned by CamScanner

कवि अपने युग, समाज और परिवेश की देन

डॉ. भगवती प्रसाद शर्मा

'तेवरी-शब्द' 'तेवर-शब्द' का स्त्रीलिंग रूप है जो विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है। किसी व्यक्ति के विशेष स्वभाव के कारण व्यक्त भाव को जो उसके व्यवहार या स्वभाव में किसी विशेष प्रबल प्रवृत्ति को दर्शाता है-तेवर कहा जाता है। इसी तेवर शब्द से मुहावरा बनता है-'तेवर बढ़ना', 'तेवर चढ़ना', 'तेवर बदलना', 'तेवर ढीला करना' आदि।

तेवर-शब्द कविता या काव्य-शब्द के पूर्व प्रयोग करने पर विशेषण का कार्य करता है और भाव विशेष को अभिव्यक्त करने वाले किसी एक कविता विशेष को तेवरी कहने पर यह शब्द 'संज्ञा' रूप का बोध कराता है। इसका अभिप्राय यह है कि किसी विशेष भाव या भावोंविशेष, तथ्यगत कथ्यों एवं प्रवृत्तियों से युक्त कविता 'तेवरी' कही जाती है। इस दृष्टिकोण से विचार किया जाये तो 'ये ज़ंजीरें क़ब टूटेंगी' तेवरी-संग्रह तेवरी शीर्षक या तेवरी नामक या तेवरी कही जाने वाली कविता या कविताओं का संग्रह है। इसकी पुष्टि इस कथन से होती है- 'राष्ट्रीय भावना, देशप्रेम, शोषितों की पीड़ा बयान करती हुई दबंगों की अति के विरुद्ध मुखर तेवरियों का संकलन।'

कवि ने इस तेवरी संग्रह को शीर्षक दिया है- 'ये ज़ंजीरें कब टूटेंगी,' जो प्रतीकात्मक है। 'ज़ंजीरें' प्रतीक है, वन्धनों का और 'टूटेंगी' प्रतीक है, मुक्ति का-स्वतंत्रता का। यहां 'टूटेंगी' शब्द का प्रयोग भी साभिप्राय है। कवि कह रहा है कि सदियों से चली आ रही गुलामी से बनी रूपी शृंखलाओं से पीड़ितों के बन्धनों को खोलकर उन्हें मुक्त करने वाला कोई भी नहीं है। इन पीड़ितों को ही ऐसी शक्ति अर्जित करनी होगी जिससे ये बन्धन स्वतः ही टूट जाएं और वे मुक्त हो जाएं। यह एक क्रान्तिकारी दृष्टिकोण है, जिसको अपनाए बिना उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हो सकेगी।

कवि अपने समाज, युग और परिवेश की देन होता है। कवि दर्शन बेज़ार का जन्म एक सुशिक्षित एवं सम्पन्न परिवार में हुआ। ऐसे परिवार में पले-बढ़े कवि के बालमन पर धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक कर्ताओं का गहरा प्रभाव पड़ा। विद्यार्थी जीवन में उसने चन्द्रशेखर आज़ाद, भगत सिंह, सुभाषचन्द्र बोस, वीर सावरकर जैसे क्रान्तिकारियों की गाथाएं सुनीं और पढ़ीं। आदर्श शिक्षकों के साथ रहकर उसने महात्मागांधी, विनोवा भावे, सीमान्त गांधी और जयप्रकाश नारायण जैसे महापुरुषों द्वारा संचालित स्वतंत्रता संग्राम, भूदान, सर्वोदय तथा अनेक समाज सुधारक आन्दोलन के क्रान्तिकारी स्वरूपों को सुना और देखा। कवि अपने क्षेत्र के स्वतन्त्रता संग्राम सेनानियों की त्यागमयी जीवन-गाथाओं और संघर्षमयी यातनाओं की कहानियों को सुनकर प्रभावित हुआ।

उसके जीवन को अनेक साहित्यकारों ने भी प्रभावित किया। प्रेमचंद, कबीर, महाप्राण निराला, कवि धूमिल, मियां नजीर अकबराबादी जैसे साहित्यकार और कवियों की रचनाओं से वह प्रभावित ही नहीं हुआ अपितु उन्हें अपना आदर्श माना।

परिपक्व भावानुभूति की अभिव्यक्ति काव्य कही जाती है। कवि दर्शन बेज़ार व्यवसाय से एक अभियन्ता होने के नाते सरकार और समाज दोनों ही पक्षों से जुड़े होने के कारण सरकार की नीतियों और समाज की विभिन्न विसंगतियों का सामना करते हुए अनुभवों की परिपक्वता प्राप्त करते रहे हैं। वे विदेशी शासकों द्वारा सदियों तक देश और देशवासियों पर किये गये अत्याचारों और शोषण की नीतियों से भलीभांति परिचित हैं। स्वतंत्रता-प्राप्ति के साथ मिली आज़ादी के जिस नवीन वातावरण और राम-राज्य की सुनहरी कल्पना हमारे पूर्वजों और आदर्शवान त्यागी नेताओं ने की थी, वह 'आसमान से गिरी और खजूर पर लटकी'

Scanned by CamScanner

कहावत को चरितार्थ करने वाली सिद्ध हुई।

'ये ज़ंजीरें कब टूटेंगी' दर्शन बेजार की तेवरी कविता का तीसरा संग्रह है। निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि 'यथार्थ की अभिव्यक्ति है दर्शन बेज़ार की तेवरी। कवि बेजार ने आज के मानव-जीवन को बड़ी गहराई और सूक्ष्मता के साथ देखा ही नहीं अपितु उसे जीया है। आज का दैनिक जीवन अनेक प्रकार के विवादों और संघर्षों से भरा हुआ है। आस्थाएं सुरक्षित नहीं हैं। आये दिन कर्फ्यू लगा रहता है। व्यक्ति अपनी पीड़ाओं को व्यक्त नहीं कर पाता है-

'दो कदम और चला जाता नहीं अब राह में,
जालिमों ने डाल दी हर पांव में जंजीर है।
अब तो मासूमों की आंखें देखती कोई न ख्वाव,
उनसे अब हरदम छलकता बेबसी का नीर है।'

हमने स्वतन्त्रता प्राप्ति की यात्रा के साठ वर्षो से अधिक समय से अनेक योजनाएं, विकास-कार्यक्रम तथा आर्थिक प्रगति के अनेकानेक के उपाय किये हैं। सड़कों के माध्यम से गांवों को शहरों से जोड़ने का काम जारी है। लेकिन गांवों की दुर्दशा अब भी प्रेमचन्द्र के होरी, धनिया और कफन के पात्रों को सामने ला खड़ी करती है-

पिछले वर्षों में तरक्की ये है सबकी गांव में
सिर्फ कागज पर सड़क है एक सुख की गांव में।
फसल अब किसान की सब सूद में जाती रही
हर तरफ तन को सुखाती भूख झलकी गांव में।
देखकर सत्ता की लाठी पंच परमेश्वर डरे
क्यों लगे चौपाल रे बेज़ार अब की गांव में।

रक्षक आज भक्षक बन गए हैं। सुख-दुख के साथी आज घर में फूट डाल रहे हैं। मानव को मानव का विभाजन भा गया है। जो बात होंठों पर है, व्यवहार में नहीं-

बांझ इंसानियत हुई बैठी/पांव हैवानियत का भारी है।
लुट गयी आज द्रौपदी यारो/देखिए कल की क्या तैयारी है।

राजनेताओं के भाषणों और प्रगति रिपोर्टों के आंकड़े आकर्षक तो हैं लेकिन देश पर उत्तरोत्तर चढ़ते कर्ज की भी कोई सीमा नहीं है-

कर रहे हैं वे निरंतर घोषणाएं/कर्ज की बैसाखियों पर जो खड़े हैं।
हर किसी को दे रहे झूठी दिलासा/शब्द जिनके धूर्त्त वाणी से जड़े हैं।
एक रोटी का यहां टुकड़ा पड़ा है/श्वानवंशी नित परस्पर अब भिड़े हैं।
बेच देंगे ये सियासतदां वतन को/शर्म क्या 'बेजार' सब चिकने घड़े हैं।

हम आज उस नई सभ्यता के साथ दौड़ रहे हैं, जिसने अपने त्यागी, बलिदानी एवं क्रान्तिकारी पूर्वजों को भुला दिया है और जो अवसरवादियों का गुणगान कर रहे हैं-

भूल गयी सभ्यता उन्हें जो इन्कलाब लेकर आए,
पूजे उनके चरण, मंच पर भाषण जो करने आए।
भुला दिए वे लोग चढ़े जो हंसते-हंसते फांसी पर,
झपट विराजे जो कुर्सी पर हमने उनके ही गुण गाए।

आतंक सर्वत्र अपना सिक्का जमाए बैठा है जिसे देख बेज़ार तड़पने लगता है-

है कहां इस गांव में वो बात अब बेज़ारजी
धूप में भी घिर रही है रात अब बेज़ारजी।
गांव का सरपंच भी आतंक का पर्याय है
खून की है हर तरफ बरसात अब बेज़ारजी।

तेवरीपक्ष, जुलाई-सितंबर-२०११, अंक-३, वर्ष-२८, पृ. ११

Scanned by CamScanner

भेड़ियों की रक्तरंजित सभ्यता के सामने
आदमी की क्या रही औकात अब बेज़ारजी।

आज वन्दन करने वाले और आशीष देने वाले भी झूठ के बल पर अपना व्यूह बनाए बैठे हैं-कवि सावधान करता है-

यह तो चोरों की बस्ती है, अपनी गठरी तू सम्हाल रे
यहां गिरहकट सुंदर-सुंदर हाट सजाए बैठे हैं।
पूछेगा 'बेजार' न कोई तेरे सच के सिक्के को,
यहां झूठ के सिक्के ही बाजार दबाए बैठे हैं।

कवि ने ऐसी अनेक विसंगतियों को अपनी तेवरी का विषय बनाया है जिनसे मुक्ति पाये बिना समाज का विकास और उन्नति सम्भव नहीं है। इन्हें मिटाने के लिए कवि समाज को विरुदावलियों और चालीसा लिखने के बजाय वैचारिक क्रान्ति को लाना होगा। संघर्षों को झेलना होगा-

सींखचों को देखकर तू हो न यूं भयभीत रे
आग उगले लेखनी कुछ इस तरह रच गीत रे।

कवि का संदेश है-

हम आग लगा देंगे उस रोज जहां में/मजबूर जुबां को जो जमाना दबाएगा।
हम तोड़ ही डालेंगे शमशीरे-नादिरी/बेज़ार कोई जब यहां खंजर उठाएगा।

कवि तेवरी लिखने का उद्देश्य भी स्पष्ट करता है-

जालिमों के रक्त प्यासे तीर को/तोड़ दो पांवों पड़ी जंजीर को
लड़ लड़ाई और भूखे पेट तू/अब बदलना है तुझे तकदीर को।
आंख हो तेरी सदृश ज्वालामुखी/दहकता अंगार पाले पीर को।
तू नहीं राझा, प्रलय का गीत तू/छोड़ दे ग़ज़लों में डूबी हीर को।
है अगर बेज़ार लिख तू तेवरी/थाम ले हाथों में इस शमशीर को।

स्पष्ट है कि तेवरी तलवार है, मुक्ति के लिए शमशीर है, पीड़ा को अंगार में बदलने वाली तासीर है। यह ज्वालामुखी की तरह फूटती है और बन्धनमुक्त कराने के लिए क्रान्ति-पथ बन जाती है।

जनक छन्द में तेवरी

रमेशराज

कछुए जैसी चाल का, कुंठाओं के जाल का, मत बनना भूगोल तू,
थर-थर कंपित खाल का, थप्पड़ खाते गाल का, मत बनना भूगोल तू।
अपना लेना आग को, किसी क्रान्ति के राग को, जीवन हो तब ही सफल,
कायर जैसे हाल का, किसी सूखते ताल का, मत बनना भूगोल तू।
अपने को पहचानकर, जीना सीना तानकर, खल को खल ही मानकर,
छोटे-बड़े दलाल का, या याचक के भाल का, मत बनना भूगोल तू।
निर्बल का सम्बल बने, जो जग को रोशन करे, जनम उसी का है सफल,
केवल रोटी-दाल का, किसी पराये माल का, मत बनना भूगोल तू।
तू बादल है सोच ले, मरु में जल है सोच ले, करना जग-कल्याण है,
उत्तरहीन सवाल का, पश्चाताप-मलाल का, मत बनना भूगोल तू।

Scanned by CamScanner

दमित चिंगारियों को आग बनाने का प्रयास

योगेन्द्र योगीराज

अक़्ल कहती है न जा कूचा-ए-क़ातिल की तरफ।
सरफ़रोशी की हवस कहती है चल क्या होगा।

ऐसी ही कशमकश के बीच सृजन हुआ कुछ शब्द रूपी अंगारों का, कवि के तेवरों से झड़ीं कुछ उल्काएं-उन्हीं अंगारों और उल्काओं की धधकती भट्ठी का नाम है-**'ये ज़ंजीरें कब टूटेंगी।'**

आगरा जनपद के ग्वालियर रोड स्थिति रोहता ग्राम के निकट पंचगाई में जन्मे, आगरा में ही शिक्षित-दीक्षित हुए एवं अभियन्ता पद से सेवानिवृत्त हुए श्री दर्शन बेज़ार के ये तेवर 'तेवरी' नामक काव्यविधा के रूप में लोकार्पित हुए हैं। ग़ज़ल की शक्लोसूरत लिये आक्रोश व्यक्त करने का यह इंकलाबी तरीका ही शायद 'तेवरी' बन गया।

अस्तु, अपनी इस कृति में दर्शन बेज़ार ने वर्तमान व्यवस्था तथा व्यक्तिशः दलितों-पीड़ितों-शोषितों और दमितों के मध्य सर्वत: क्रांति की दमित चिंगारियों को ज्वाला बनाने का आह्वान किया है। अंधे-बहरे निज़ाम के खिलाफ़ आमजन की विवशता को उकेरते हुए वे कहते हैं-

तेरे दुःख से किसे काम है/बोल न कुछ बहरा निज़ाम है।
कौन सुनेगा तेरे घर की/गली-गली में कोहराम है।।

नैतिकता, मानवता, कर्तव्यपराणता एवं सर्वोपकारी साहस आज लगभग हर व्यक्ति की चेतना से लुप्त हो गया है। मनुष्य की कथनी और करनी जमीन-आसमान की तरह दूरी बना चुकी है। अधिसंख्य लोग बेशर्म-बेमुरब्बत हो गये हैं। ऐसा ही ख़्याल कवि के आक्रोश भरे तेवर से छिटककर निकल पड़ता है-

एक अभागिन चीरहरण पर विलख-विलख कर चिल्लायी,
आंखें नीची किए उधर से चले गये मुंह फेरे लोग।
कैसे जीवित बच पायेंगे जो निर्बल हैं परबस हैं,
सिर्फ़ यही चर्चा करते हैं अब तो सांझ-सवेरे लोग।।

कवि न केवल मानवीय विद्रूपताओं को देखकर उद्वलित होता है, बल्कि सर्वजननी पृथ्वी माता की पीड़ा से भी आहत होता है-

सूखे ताल-तलैया, नदियां, रीती गागर खाली डोल।
कब तक ये विद्रूप रहेगा धरती माता कुछ तो बोल।।

वसुंधरा की गोद जैसे नैसर्गिक सन्तति के लिए छटपटा रही है, वैसे ही आधुनिक सभ्यता-संस्कृति की भेंट चढ़ चुके संयुक्त परिवारों के एकाकी, अवस, परित्यक्त एवं कुंठित बुजुर्ग अपने परिवारों के थोड़े से भी थोड़े प्रेम व सान्निध्य के लिए तरस रहे हैं। बुजुर्गों को बोझ समझने वाली नितांत भोगवादी स्वार्थी संतानों व परिजनों के सम्मुख उनकी विवशता को व्यक्त करते हुए दर्शन बेज़ार आधुनिक समाज से जैसे प्रत्युत्तर चाहते हैं-

उनके हिस्से में कुटियां का बस छोटा-सा कोना है,
बुड्ढ़े-बुढ़िया क्या कर लेंगे जब बंटवारा होना है।

कवि अनेक मसलों पर बहुत कुछ कहता है। जैसा देखा, जैसा पाया, जैसा भोगा वह सब अनुभव कवि की लेखनी में उतरा है। कवि कहीं आवेशित है तो कहीं विवश, कहीं रुदित है तो कहीं आशान्वित, कहीं अतिशय वाचाल दीखता है तो कहीं

Scanned by CamScanner

मौन। उसने जैसे हर अनुभव को व्यक्त करने की पुरज़ोर कोशिश की है-

नाम था जिसके कभी वारंट जारी,
आज उसकी आरती सबने उतारी।
सालभर तक पुलिस से बचते रहे जो,
नगर में उनकी निकलती है सवारी।।

दूसरी ओर मज़लूमों को इंकलाब के लिए ललकारते हुए कवि की तेज़ाबी क़लम यकायक तेज़ाब उगल देती है-

तू अपनी खुदी की हिफ़ाजत में लग जा,
जमाने से खुलकर बग़ावत में लग जा।
क़सम है तुझे आज बहते लहू की,
हर एक जुल्म की तू खिलाफ़त में लग जा।।

यद्यपि इस काव्यकृति में कई जगह यथार्थ और सत्य को भावावेश में नकार दिया गया है तथापि कवि की गहन अन्तर्भावाभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के सम्मुख उसको गौण माना जा सकता है क्योंकि आवश्यक नहीं कि कविता में वे सभी शास्त्रीय (तयशुदा) तत्त्व, गुण व सत्य अनिवार्य रूप से समाहित हों जो विज्ञजनों को अपेक्षित हैं। इसलिये काव्य के दोषों की अवहेलना करके यदि अन्यान्य आधुनिक काव्य-प्रयोगों को तुलनात्मक भावों की (कथनात्मक शैली) की विवधिता पूर्ण विधाओं पर तौला जाये तो कवि अपनी अर्न्तभूमि-अनुभूत संवेदनाओं को तेवरी के माध्यम से अभिव्यक्त करने में सफल रहा है। इस काव्यकृति की यथार्थता इसके सम्पूर्ण अध्ययन एवं मनन से जानी जा सकती है।

सार्थक सृजन प्रकाशन, अलीगढ़ से प्रकाशित शब्द-सुमन के रूप में यह कृति पठनीय व विचारणीय है। पुस्तक का कलेवर स्वयं को अर्थ प्रदान करता दिखाई देता है। वसंती चोले में सिमटे पृष्ठ आज़ादी के विस्मृत जुनून के वासंती उत्साह का प्रतीक हैं तो सादगी पूर्ण मुखपृष्ठ पर लाल रंग में श्रृंखलाबद्ध व्यक्ति किसी बलिदानों के तुनक मसीहा या समाज की मुक्तिदायिनी करुण प्रतीक्षा का संकेत है। संक्षेप में सारांशतः कवि दर्शन बेज़ार अपनी इस कृति के द्वारा हमेशा जाने जाते रहेंगे। उन्हीं के शब्दों में-

सींखचों को देखकर तू हो न यूं भयभीत रे।
आग उगले लेखनी कुछ इस तरह रच गीत रे।।

तेवरी

दीपक श्रीवास्तव

दिल में लगी आग बुझा कर तो देखो।
मन में ला रंज मिटा कर तो देखो।
घर-घर में आग लगाना छोड़ कर,
चिंता दुश्मनी की मिटा कर तो देखो।
पन्नों में सियासत जो दूरियों की लिख दी,
आंसुओं से पन्ने वे गला कर तो देखो।
खून की होली खेलने वालो सुनो तो सही,
दीपक दिवाली के जला कर देखो।
मिल जायेगा स्वर्ग यहीं पर सभी को,
दिल को दिल से मिला कर देखो।

11/10/25/1 ए राम नगर, नवल गंज, नुनिहाई रोड, आगरा।

Scanned by CamScanner

तेवरी के तेवरों से सम्पृक्त संग्रहः 'ये ज़ंजीरे कब टूटेंगी'

मदन मोहन उपेन्द्र

सृजन सदैव दो धाराओं में हुआ है, एक ओर सताधीशों के मन बहलाव के लिए तो दूसरी ओर शोषित-पीड़ित के पक्ष में व्यवस्था परिवर्तन की जद्दोजहद के लिए। तेवरी कविता शोषित-पीड़ित के लिए समर्पित काव्य-साधना है। यद्यपि प्रगतिशील, जनवादी कविता के अनेक रूप-स्वरूप हैं यथा-जनगीत, जनकविता, जन गज़ल एवं तेवरी आदि हैं, किन्तु हिन्दी-उर्दू-ग़ज़ल के फार्म में जन को समर्पित कविता को भले ही अनेक नामों से परसीमित किया जाये किन्तु तेवरी का परिचालन अधिक सार्थक सिद्ध हुआ है। 'सप्तक' की परम्परा के समान ही तेवरी के भी अनेक कवियों के सामूहिक संकलन छपे हैं। उन्हीं नामों में से चर्चित नाम है कवि श्रेष्ठ श्री दर्शन बेज़ार का। यद्यपि दर्शन बेज़ार ने स्वयं को प्रचार-प्रसार से दूर रखा है, किन्तु लिखा जमकर है और धारदार लिखा है। इनका पूर्व संग्रह **'देश खण्डित हो न जाए'** काफी चर्चित रहा है। इसकी रचनाओं में तेवर-ताजगी एवं आक्रोश परिलक्षित होता है। व्यवस्था-विरोध, शोषित की बेबसी आदि का विवरण धारदार काव्य-पंक्तियों में व्यक्त हुआ है। यथा-

अब कलम तलवार होने दीजिए/दर्द को अंगार होने दीजिए।

'एक प्रहार लगातार' एवं **'देख खण्डित हो न जाए'** तेवरी संग्रहों के उपरान्त प्रस्तुत तेवरी संग्रह **'ये जंजीरे कब टूटेंगी'** भी उसी तेवर एवं तासीर के साथ अपनी धारदार तेवरियों के लिए पहचान बनायेगा। संग्रह की प्रथम तेवरी की प्रारम्भिक पंक्तियों का तेवर अपनी धार, तीखी बानगी से कितना तप्त है, जरा देखिए-

जालिमों के रक्त-प्यासे तीर को/तोड़ दे पांवों पड़ी जंजीर को,
लड़ लड़ाई और भूखे पेट तू/अब बदलना है तुझे तकदीर को।

इतना ही नहीं एक और तेवरी के तेवर भी कम नहीं हैं-

जुल्म आदमी का खुद पै जारी है/ हाथ में बरछियां, कटारी है।
बांझ इन्सानियत हुई बैठी/पांव हैवानियत का भारी है।

अपने पारिवारिक एवं ग्रामीण परिवेश का चालीसा कहते-कहते भी कवि बेज़ार ने अपनी तीखी बेज़ारियत एवं व्यवस्था के विपरीत आक्रोश को जारी रखा है। वास्तव में उनका जैसा भी सोच रहा है, यह यथार्थ और अभिव्यक्ति की सचाई है कि उनका दर्द उनकी तेवरियां बयान करती हैं यथा-

खून से दीवार पर लिक्खी हुई तकदीर है
आज सीने में समाई हर किसी के पीर है।

वस्तुतः संग्रह की तेवरियों में दर्शन बेज़ार द्वारा देखे-परखे और पग-पग पर छले गये, दले गये एवं कुचले गए इन्सान की नग्न तस्वीर उजागर हुई है यथा-

मिल गया अस्सी करोड़ों को बहुत पहले स्वराज
पर नहीं बदला अभी भी सामंतशाही का मिजाज।

वर्तमान कवि एवं कविता पर भी बेज़ार ने तीखा प्रहार इस प्रकार किया है-

दिनकर की हुंकारें गायब मंचों से /मात्र चुटकुलाविज्ञ हमारे भाई अब।

अस्तु! अनेक प्रहार पर प्रहार वह भी धारदार कवि दर्शन बेज़ार की तेवरियों में निहित हैं। यह तो मात्र बानगी के रूप में कतिपय अंश प्रस्तुत किये गये हैं। संग्रह में प्रस्तुत 48 तेवरियां अपनी तेवरी-तासीर एवं संजीदगीयुक्त ताजगी से भरपूर हैं जिनमें गागर में सागर जैसा विस्तार है। पूर्ण विश्वास है कि इस संग्रह को साहित्य जगत एवं प्रबुद्ध पाठक वर्ग-शालीनता से अपनायेगा और शुद्ध समालोचनाओं को भी बल मिलेगा।

Scanned by CamScanner

भारत सरकार पंजीकरण संख्या-51714/87

शोधार्थियों के लिये एक महत्वपूर्ण पुस्तक

विचार और रस

(रस-निष्पत्ति का वैचारिक विवेचन)

लेखक-रमेशराज

राष्ट्रीय बाल कविताएँ

कवि-रमेशराज

प्राप्ति स्थल-बजरंग प्रकाशन, सागरपुर, दिल्ली

रस-परम्परा में एक नये रस की खोज

विरोध-रस

लेखक- रमेशराज

सार्थक-सृजन, १५-१०९, ईसानगर, निकट-थाना सासनीगेट, अलीगढ़

महत्वपूर्ण तेवरी संग्रह

(1) अभी जुबां कटी नहीं	संपादक-रमेशराज
(2) कबीर ज़िन्दा है	संपादक-रमेशराज
(3) इतिहास घायल है	संपादक-रमेशराज
(4) एक प्रहार: लगातार	तेवरीकार-दर्शन बेज़ार
(5) देश खण्डित हो न जाए	तेवरीकार-दर्शन बेज़ार

सार्थक-सृजन, १५-१०९, ईसानगर, निकट-थाना सासनीगेट, अलीगढ़

डाक पंजीकरण संख्या-ए.एल.जी. /67/08/2010

प्रतिष्ठार्थ-

सं-राष्ट्रप्रहरी, श्री रहमतुल्लाह 'रहमत', रेलवे
पुल के निकट, कोर्ट रोड,
जामताड़ा (झारखण्ड)-815351

संपादक/ प्रकाशक/ मुद्रक रमेशराज द्वारा सार्थक सृजन प्रकाशन कार्यालय-15-109, ईसानगर, निकट-थाना सासनीगेट, अलीगढ़ के लिये शारदा प्रटिंग प्रैस हेतु आशू प्रिंटिंग प्रैस, अचल तालाब, अलीगढ़ से मुद्रित। मोबा. ९३५९९८८०१३

Scanned by CamScanner